राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में सुभाष चंद्र बोस के विचार

डॉ० कु० पंकज शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
इतिहास विभाग
एन०ए०एस० कॉलिज, मेरठ
ईमेलः dr.pankajsharma1656@gmail.com

सारांश

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में जिन देशभक्तों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा उनमें नेताजी सुभाष चन्द बोस का नाम अग्रणी हैं। सुभाष चंद्र बोस हमेशा से ही भारतीय जनता विषेशकर युवाओं के प्रेरणा स्रोत रहे है। उनका गहन अध्ययन, स्पष्ट विचार दृष्टि और उस पर चलने का दृढ़ संकल्पः उनका ओज और अदम्य साहस उन्हें भूत और भविष्य के सभी नेताओं से अलग करता है।

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 28.08.2023
Approved: 20.09.2023

डॉ० कु० पंकज शर्मा

राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में सुभाष चंद्र बोस के विचार

RJPP Apr.23-Sep.23,
Vol. XXI, No. II,

PP. 186-189
Article No. 25

Online available at:
https://anubooks.com/journal/rjpp

सुभाश चन्द्र बोस का जन्म भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के 12 वर्ष बाद हुआ था। इस समय तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जन आंदोलन का रूप ग्रहण कर चुकी थी, देश में राष्ट्रवाद के इस सामान्य वातावरण के साथ–साथ सुभाष के राष्ट्रवादी होने के कुछ व्यक्तिगत कारण भी थे। सुभाष चंद्र बोस स्वामी विवेकानन्द और महान राष्ट्रवादी नेता श्री अरविन्द घोष से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने अरविन्द घोष से प्रभावित होने के कारण ही इण्डियन सिविल सर्विसेज से त्यागपत्र देने और अपने आपको भारत की आजादी के लिये समर्पित करने का निश्चय किया था।

सुभाष चन्द्र बोस के राष्ट्रवाद का आधार स्वामी विवेकानंद एवं अरविन्द घोष के विचार थे। सुभाष चन्द्र बोस धर्म को राष्ट्रवाद का उत्प्रेरक मानते थे। विवेकानंद और अरविन्द घोष की भांति सुभाष चन्द्र बोस का मत था, कि भारत को आजादी अवश्य प्राप्त करनी चाहिये क्योंकि उसके पास मानव जाति को देने के लिए बहुत कुछ है। भारत को मानव जीवन के प्रत्येक पहलू में विश्व की सभ्यता तथा संस्कृति के लिए कुछ मौलिक योगदान करना है। अपने अद्यःपतन और गुलामी के दौरान भी उसका योगदान किसी भी दृष्टि से कम नहीं है। जरा एक बार कल्पना कीजिये कि देश का योगदान उस समय कितना विशाल होगा जबकि वह अपने ही तरीके से अपनी आवश्यकताओं के अनुसार जीवन जीने के लिये स्वतंत्र होगा।[1]

सुभाष चन्द्र बोस ने राष्ट्रवाद की परिभाषा देने का कोई प्रयत्न नहीं किया किन्तु वे राष्ट्रवाद की उस सामान्य परिभाषा को स्वीकारते है जो एक पराधीन राष्ट्र में विदेशी विरोधी भावना' के रूप में जानी जाती है। उन्होंने कहा था कि ''यदि देश में आज एक सशक्त आंदोलन है और एकता की सुदृढ़ अनुभूति है तो वह सिर्फ इसलिए है कि देशवासियों को अपने इतिहास से प्रथम बार पता चला कि उन्हें परास्त कर दिया गया है और साथ ही उन्हें परास्त कर दिया गया है और साथ ही उक्त पराजय के शोचनीय परिणामों, सांस्कृतिक और भौतिक राजनीतिक गुलामी से उत्पन्न होते है। यह भावना भी बलवती हो गयी।[2]

सुभाष चन्द्र बोस का मत था कि अंग्रेजों को छोड़कर, भारत की जनता में कभी भी विदेशियों के प्रति 'विदेशी विरोधी भावना' नहीं रही। सुभाष चन्द्र बोस का मानना था कि भारतीय इतिहास में आदि से अन्त तक दृष्टिपात करने पर दिखाई देता है कि विदेशी तत्वों को प्रारम्भ से ही भारतीय समाज में अपने में आत्मसात किया है।[3]

लेकिन अंग्रेजी ही इसके एकमात्र और प्रथम अपवाद है। इसका मुख्य कारण यह था कि अतीत के आक्रमणकारियों के भांति उन्होंने भारत को अपना घर नहीं बनाया। यही नहीं उन्होंने भारतीयों के स्थानीय एवं व्यक्तिगत मामलों में भी हस्तक्षेप किया। सुभाष चन्द्र बोस के अनुसार ''भारतीय लोग पहली बार अनुभव करने लगे थे कि उन पर सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टि से ऐसे लोगों का आधिपत्य स्थापित हो रहा है जो उनसे सर्वथा भिन्न एवं विदेशी है, उनके साथ उनकी कोई समानता नहीं है। अंग्रेजी शासन के विरूद्ध विद्रोह का मूल कारण यही है।[4]

सुभाष चन्द्र बोस के अनुसार राष्ट्र निर्माण की दिशा के प्रथम कदम सचरित्र और सद्पुरूषों का निर्माण एवं द्वितीय कदम संगठन का है। एक युवा सम्मेलन में उन्होंने कहा था, ''मेरा अपना एक नवीन कार्यक्रम है परन्तु उसके क्रियान्वयन के लिये उपयुक्त समय नहीं हैं, सही समय केवल उस

समय आयेगा जब सभी लोग शिक्षित होकर आयेंगे। सुभाष ने समग्र चरित्र विकास के लिये तीन बातों पर जोर दिया था शारीरिक शिक्षा, व्यवस्थित अध्ययन और चिन्तन।''[5]

राष्ट्रीय एकता की भावना न केवल राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान अपितु आजादी के बाद भी बनाये रखने के लिये सुभाष चिन्तित थे। उनका विचार था कि ब्रिटिश शासन हट जाने के बाद लोगों को एक जुट रखने के लिये विशेष प्रत्यन करने की आवश्यकता होगी। सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने के लिए राज्य को सब कुछ करना पड़ेगा। प्रचार के सम्पूर्ण माध्यम प्रेस, रेडियों, सिनेमा आदि का इस प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए प्रयोग करना होगा, इन सबके लिये एक उपयुक्त दल भी संगठित करना होगा ताकि राष्ट्रीय एकता के विरूद्ध किये जाने वाले कृत्यों का कठोरता से दमन किया जा सके।[6]

धर्म जो राष्ट्रवाद का एक आधारभूत तत्व है, के सम्बन्ध में सुभाष चन्द्र बोस का दृष्टिकोण बिल्कुल भिन्न था। भारत में धर्मों की विविधता ने सुभाष चन्द बोस को कभी विचलित नहीं किया। सुभाष धार्मिक विविधता को राष्ट्रवाद की उत्पत्ति में बाधक नहीं मानते थे। उनका विचार था कि 'स्वतंत्र भारत में धर्मों के प्रति सरकार का दृष्टिकोण पूर्ण रूपेण तटस्थ और निरपेक्ष होना चाहिये। ध र्म के प्रति इस तटस्थ नीति पर वे जीवन भर कायम रहे।[7]

सुभाष चन्द्र बोस को अपनी प्राचीन परम्पराओं और संस्कृति पर गर्व था। उनके मन में अपने देश के अतीत की महानता को लेकर आदर भाव था। बड़े गर्व के साथ उन्होंने कहा था कि ''हमारा देश बहुत प्राचीन है और इसकी संस्कृति भी उतनी ही प्राचीन है, इसीलिये इसकी जन्मजात दृढ़ता एवं जीवन शक्ति का कभी भी पूर्ण रूप से पतन नहीं हुआ है। उनका मत था कि हमारा शानदार अतीत उस काल में था जब हमारे पूर्वज गरजते सागरों को लांघ कर सुदूर देशों में उपनिवेश स्थापित करते और वहाँ के लोगों के साथ व्यापार करते तथा उनके साथ ज्ञान एवं संस्कृति का विनिमय करते थे। आज भी दर्शन, साहित्य, विज्ञान, कला एवं संस्कृति आदि क्षेत्रों में हमारे पास विश्व को देने के लिए बहुत कुछ है। जिसके लिये वह आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा है।[8]

सुभाश चन्द्र बोस के राष्ट्रवाद के बौद्धिक होने के पीछे बहुत कारण थे– 1907 में 'सूरत फूट' के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दो वर्गों में विभाजित हो गयी थी नरम एवं गरम दल। गोपाल कृष्ण गोखले के नेतृत्व में नरम दल स्वराज्य को संवैधानिक साधनों के माध्यम से प्राप्त करना चाहता था तो दूसरी तरफ बौद्धिक राष्ट्रवाद का नेतृत्व बाल पाल लाल कर रहे थे, इनका दृष्टिकोण उग्र था और वे बिट्रिश साम्राज्य के सक्रिय प्रतिरोध की वकालत करते थे। सुभाष चंद बोस ने इस पृष्ठभूमि में राजनीति में प्रवेश लिया। अरविन्द घोश के चमत्कारिक प्रभाव के कारण वे स्वभावगत इस नवीन बौद्धिक राष्ट्रवाद की ओर खिंचते चले गये। उनका राष्ट्रवाद फासीवाद या नाजीबाद की तरह अतिवादी नहीं था, वे केवल अपनी कार्यप्रणाली के प्रति अतिवादी थे और उनके राष्ट्रवाद का आधार और चरित्र भी आध्यात्मिक था।

गरम दलीय राष्ट्रवादी के रूप में सुभाष सदैव ब्रिटानी शासन के साथ ''डोमिनियन स्ट्रेटस' की घोषणा के विरोधी थे। वे भारत के लिए पूर्व स्वरज्य को आवश्यक मानते थे, स्वराज्य से उनका आशय था– पूर्ण स्वतंत्रता जिसका अर्थ था ब्रिटानी गठजोड़ का पूरी तरह से टूटना।

नेताजी का राष्ट्रवाद का विचार समानता, स्वतंत्रता और न्याय, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और शक्ति संतुलन की अवधारणाओं के इर्द गिर्द घूमता था। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत के लिये उनका राष्ट्रवाद भारत को एक राष्ट्र के रूप में स्थापित करने की अवधारणा में निहित था। जिसके अस्तित्व के रूढ़िवादी तरीके को पूरी तरह से बदल दिया गया था, जो वास्तविक राष्ट्रीय एक जुटता की ओर ले जाता है और जो लम्बे समय में भारत को वैश्विक गौरव की स्थिति में ले जायेगा।[9]

सुभाष चंद बोस ने भारतीय राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास के नये दृष्टिकोण को प्रतिपादित किया। देश तथा देश के बाहर अपने समस्त क्रियाकलापों में सुभाष चंद बोस ने निर्भीकता से राष्ट्रवाद का समर्थन किया, जिसमें किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता की गुंजाइश नहीं थी। बोस को उनकी ज्वलंत देशभक्ति, देश को ब्रिटिश साम्राज्यवाद की श्रृंखलाओं से मुक्त कराने के आदर्श के प्रति उनकी उन्मुखतापूर्ण निष्ठा तथा राष्ट्र के लिये उन्होंने जो घोर कष्ट सहे वे भारतीय इतिहास में अविस्मरणीय है।

संदर्भ

1. Bose, S.C. (1953). The mission of Life: The tracker. Spink & Company: Calcutta. Pg. **220.**
2. Bose, S.C. (1920-1942). The Indian Struggle. Complied by Netaji Research Breauro. Calcuta. Pg. **11.**
3. Ibid. Pg. **11.**
4. Ibid. Pg. **7.**
5. Singh, J.S. (1947). Important speeches and writings of S.C. Bose: bering a collection of most significant speeches, writings and letter of Subhash Chand Bose. lahore. Pg. **60.**
6. Ibid. Pg. **13.**
7. Ibid. Pg. **378.**
8. Ayer, S.A. Selected speeches of S.C. Bose. Pg. **147.**
9. Singh, J.S. (1947). Important speeches and writings of S.C. Bose: bering a collection of most significant speeches, writings and letter of Subhash Chand Bose. Lahore. Pg. **60.**